



2026:AHC: 45127-DB

उच्च न्यायालय, इलाहाबाद

रिट सी संख्या - 44795 वर्ष 2025

सरिता देवी

.....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

भारत संघ और 3 अन्य

.....प्रत्यर्थी(गण)

याचिकाकर्ता(गण) के अधिवक्ता : मोहम्मद परवेज खान, राज कुमार सिंह, विपुल यादव

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : ए.एस.जी.आई., दिनेश वरुण

सुरक्षित

प्रकाशनार्थ स्वीकृत

न्यायालय संख्या-2

माननीय न्यायमूर्ति अतुल श्रीधरन

माननीय न्यायमूर्ति सिद्धार्थ नंदन

माननीय न्यायमूर्ति सिद्धार्थ नंदन द्वारा

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री राज कुमार सिंह और प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता श्री दिनेश वरुण को सुना गया।

2. पक्षकारों की सहमति से रिट याचिका का निस्तारण ग्रहण स्तर पर ही किया जा रहा है।

तथ्य

वर्तमान वाद में स्वीकृत तथ्य यह हैं कि-

1. श्री विनोद कुमार जोशी (याचिकाकर्ता के पति) सीनियर सेक्शन इंजीनियर (इलेक्ट्रिकल)/रेणुकूट के अधीन वरिष्ठ तकनीशियन (इलेक्ट्रिकल) के रूप में कार्यरत थे। 08.04.2023 को, लगभग सुबह 7.30 बजे, रेणुकूट मुख्य कॉलोनी में बिजली कटौती की सूचना

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



मिली और सूचना मिलने पर, सीनियर सेक्शन इंजीनियर (इलेक्ट्रिकल)/रेणुकूट ने मृतक को एक श्री विनोद कुमार (वरिष्ठ तकनीशियन) के साथ सुबह 8.00 बजे उस खराबी को ठीक करने का निर्देश दिया। गश्त के दौरान, टीम ने पावर हाउस के पास एक जले हुए 11 केवी एचटी फ्यूज की पहचान किया और सुबह 9.35 बजे 11 केवी एचटी लाइन के शटडाउन के अनुरोध के बाद, मृतक दस्ताने और हेलमेट सहित आवश्यक सुरक्षा उपकरणों से लैस होकर उपयोगिता खंभे/सीढ़ी पर चढ़ने के लिए आगे बढ़ा, जबकि उसके सहकर्मी श्री विनोद सिंह ने नीचे से सीढ़ी को सुरक्षित पकड़ रखा था।

2. सीनियर सेक्शन इंजीनियर, पूर्व मध्य रेलवे, रेणुकूट और चोपन की रिपोर्ट और श्री विनोद सिंह (सहकर्मी) के बयान के अनुसार, लगभग सुबह 9.45 बजे अपने आधिकारिक कर्तव्यों का पालन करते समय, मृतक खंभे से गिर गया। उसे तुरंत रेलवे कर्मचारियों द्वारा हिंडाल्को अस्पताल ले जाया गया, जहां उसे मृत घोषित कर दिया गया और एक एफ.आई.आर. भी दर्ज की गई; और पोस्टमार्टम परीक्षण किया गया।

पोस्टमार्टम रिपोर्ट के अनुसार, निम्नलिखित मृत्यु-पूर्व चोट पाई गई:-

"1. दाहिने कोहनी से 4 सेमी नीचे दाहिने अग्रबाहु पर 25 सेमी x 14 सेमी आकार की बिजली के झटके से जलने की चोट।

2. सिम्बिलियन्स से 10 सेमी नीचे 7 सेमी x 1 सेमी आकार की बिजली के झटके से जलने की चोट।

3. दाहिने तरफ खोपड़ी (पार्श्विका हड्डी) पर 7 सेमी x 5 सेमी आकार की सूजन, दाहिने अंतर्निहित हड्डी के फ्रैक्चर के 10 सेमी ऊपर, और चोट के नीचे लगभग 50 मिली रक्त का थक्का।

4. निकास घाव - बाएँ तलवे की नाव पर 2 सेमी x 1 सेमी आकार की बिजली के झटके से जलने की चोट।"

3. प्रत्यर्थियों द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि एक संयुक्त विवेचना में, यह पाया गया कि यह घटना एक कार्यस्थल दुर्घटना थी, जो कर्तव्य पालन के दौरान घटित हुई थी। पोस्टमार्टम रिपोर्ट का परिशीलन भी इंगित करता है कि 2 सेमी x 1 सेमी आकार का एक निकास घाव था और सिम्बिलियन्स से 10 सेमी नीचे 7 सेमी x 1 सेमी आकार की बिजली के झटके से जलने

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



की चोट थी; जिसका प्रत्यर्थियों द्वारा विवाद नहीं किया गया है, अतः दुर्घटना को स्पष्ट रूप से बिजली के झटके के कारण माना गया।

4. याचिकाकर्ता को 10,16,700/- रुपये का प्रतिकर दिया गया था, लेकिन वह एकपक्षीय अभिकलन से संतुष्ट नहीं थी और तदनुसार उसने प्रतिकर के उक्त अभिकलन को चुनौती दिया है। वर्तमान रिट याचिका इसमें वृद्धि के लिए दाखिल की गई है, क्योंकि पीठासीन अधिकारी द्वारा डब्ल्यू.सी. वाद संख्या 15/2023(डी) (श्रीमती सरिता देवी बनाम मंडल रेल प्रबंधक) में अपने आदेश दिनांक 29.12.2023 में या प्रत्यर्थियों द्वारा अभिकलन का कोई आधार प्रदान नहीं किया गया था।

विवादयक-

(i) क्या प्रतिकर राशि के परिमाणीकरण के अभाव में, कर्मचारी प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 5 के साथ पठित धारा 4(1)(ए) के प्रावधान के दृष्टिगत आदेश दिनांक 29.12.2023 द्वारा इसके निर्धारण को उचित ठहराया जा सकता है; और यह भी कि क्या, तथ्यात्मक संदर्भ में, याचिकाकर्ता नुकसान के रूप में वृद्धि की हकदार है।

(ii) क्या रेलवे प्राधिकारी की प्रतिकर के संबंध में गणना को दावेदार/याचिकाकर्ता को बिना कोई अवसर दिए स्वीकार करना और उसे अंतिम मानना, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन में, निर्णय-पश्चात सुनवाई के समान है।

(iii) क्या सरकार द्वारा "मासिक मजदूरी" के निर्धारण के संबंध में धारा 4(बी) के अंतर्गत शक्ति के कथित प्रयोग में जारी की गई अधिसूचना, अधिनियम, 1923 की धारा 5 पर अभिभावी होगी।

तर्क - (विवादयक संख्या 1)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि न तो अभिलेख पर रखे गए साक्ष्य पर विचार किया गया और न ही सुनवाई का कोई अवसर प्रदान किया गया, इससे पहले कि प्रत्यर्थी-प्राधिकारियों द्वारा निर्धारित 10,16,700/- रुपये के एकपक्षीय प्रतिकर को स्वीकार किया गया और इसे याचिकाकर्ता के पक्ष में जारी करने का निर्देश दिया गया; हालांकि प्राधिकारियों द्वारा प्रतिकर के निर्धारण के लिए "प्रासंगिक कारकों" को ध्यान में नहीं रखा गया था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



2. उन्होंने कर्नाटक राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम बी.टी. सोमशेखराय्या के वाद में निर्णय पर भरोसा किया है, यह तर्क देने के लिए कि अधिनियम, 1923 की धारा 4 के अंतर्गत प्रतिकर प्रदान करने के उपशमनकारी कारकों के अलावा, आयुक्त को कर्मकार द्वारा किए गए दावे से अधिक प्रतिकर प्रदान करने की शक्ति है, यदि तथ्य नुकसान के रूप में ऐसे पंचाट को उचित ठहराते हैं।

3. उन्होंने आगे तर्क दिया है कि पोस्टमार्टम रिपोर्ट के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि लापरवाही विभाग के कर्मचारियों की थी, क्योंकि 11 केवी एचटी लाइन का शटडाउन नहीं किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप मृतक की मृत्यु हो गई; और इसलिए राज्य परोक्ष रूप से उत्तरदायी था।

4. इसके विपरीत, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया है कि प्रतिकर का परिमाणीकरण अधिनियम, 1923 की धारा 4 के आदेश के अनुसार किया गया था और उन्होंने आगे तर्क प्रस्तुत किया है कि उपरोक्त प्रतिकर के अलावा, इयूटी पर मृत कर्मचारी को देय सभी स्वीकार्य सेवानिवृत्ति लाभों का भुगतान 21,33,567/- रुपये की सीमा तक किया गया था; और आगे परिपत्र संख्या आर.बी.ई. संख्या 139/2016 दिनांक 25.11.2016 के अनुसार अधिकतम स्वीकार्य अनुग्रह राशि अर्थात् 25,00,000/- रुपये का भी भुगतान किया गया था; और इसलिए उनके द्वारा अभिकलित प्रतिकर राशि की स्वीकृति पूरी तरह से न्यायोचित थी। हालांकि, उन्होंने इयूटी पर मृत कर्मचारी के संबंध में पोस्टमार्टम रिपोर्ट और मृत्यु के कारण का विवाद नहीं किया था।

चर्चा- (विवादक संख्या 1)

1. इन स्वीकृत तथ्यों के दृष्टिगत कि मृतक जो विभाग का कर्मचारी था, की मृत्यु तब हुई जब वह अपना कर्तव्य निभा रहा था और पोस्टमार्टम रिपोर्ट स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि मृतक को बिजली के झटके से जलने की चोट लगी थी; यह विभाग की लापरवाही को प्रदर्शित करता है और यही सीढ़ी से गिरने का मुख्य कारण था, जिसके कारण याचिकाकर्ता के पति की मृत्यु हुई। अब, यह देखा जाना है कि क्या राज्य परोक्ष रूप से उत्तरदायी है और क्या न्यायनिर्णयन प्राधिकारी प्रतिकर का निर्धारण करते समय इसे ध्यान में रखने में विफल रहा है और इसलिए उपरोक्त पृष्ठभूमि में, जो मुख्य प्रश्न विचारणीय है, वह प्रतिकर के परिमाणीकरण का आधार है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



2. इस मोड़ पर, धारा 4(1)(ए) और धारा 5 को उद्धृत करना प्रासंगिक होगा, जो नीचे दिए गए हैं:

" [4. प्रतिकर की राशि.-(1) इस अधिनियम के प्रावधानों के अधीन, प्रतिकर की राशि निम्नलिखित होगी, अर्थात:-

(ए) जहां चोट के परिणामस्वरूप मृत्यु होती है, वहां मृत [कर्मचारी] की मासिक मजदूरी के [पचास प्रतिशत] के बराबर राशि को प्रासंगिक कारक से गुणा किया जाएगा; या [एक लाख बीस हजार रुपये] की राशि, जो भी अधिक हो;

5. [मजदूरी की गणना की विधि. - [इस अधिनियम में और इसके प्रयोजनों के लिए "मासिक मजदूरी" अभिव्यक्ति का अर्थ मजदूरी की वह राशि है जो एक महीने की सेवा के लिए देय मानी जाती है (चाहे मजदूरी महीने के हिसाब से देय हो या किसी अन्य अवधि के हिसाब से या कार्य-दर पर), और जिसकी गणना] निम्नानुसार की जाती है, अर्थात:-

(ए) जहां [कर्मचारी] दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती कम से कम बारह माह की निरंतर अवधि के दौरान, उस नियोक्ता की सेवा में रहा हो जो प्रतिकर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, वहां [कर्मचारी] की मासिक मजदूरी उस अवधि के अंतिम बारह माह में नियोक्ता द्वारा उसे भुगतान के लिए देय कुल मजदूरी का एक-बारहवां भाग होगी;

[(बी) जहां दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती सेवा की संपूर्ण निरंतर अवधि, जिसके दौरान [कर्मचारी] उस नियोक्ता की सेवा में था जो प्रतिकर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, एक महीने से कम थी, वहां [कर्मचारी] की मासिक मजदूरी वह औसत मासिक राशि होगी, जो दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती बारह माह के दौरान, उसी नियोक्ता द्वारा उसी कार्य पर नियोजित किसी [कर्मचारी] द्वारा अर्जित की जा रही थी, या, यदि इस प्रकार नियोजित कोई [कर्मचारी] नहीं था, तो उसी इलाके में समान कार्य पर नियोजित किसी [कर्मचारी] द्वारा;]

[(सी)] [अन्य मामलों में [जिनमें ऐसे मामले भी शामिल हैं जिनमें आवश्यक जानकारी के अभाव में खंड (बी) के अंतर्गत मासिक मजदूरी की गणना करना संभव नहीं है]], मासिक मजदूरी उस नियोक्ता से, जो प्रतिकर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है,



दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती सेवा की अंतिम निरंतर अवधि के संबंध में अर्जित कुल मजदूरी का तीस गुना होगी, जिसे ऐसी अवधि वाले दिनों की संख्या से विभाजित किया जाएगा।

स्पष्टीकरण.—[इस [धारा]] के प्रयोजनों के लिए सेवा की एक अवधि को निरंतर माना जाएगा जो काम से अनुपस्थिति की अवधि से चौदह दिनों से अधिक बाधित न हुई हो।"

3. उपरोक्त प्रावधान के परिशीलन से इंगित होता है कि जहां चोट के परिणामस्वरूप मृत्यु होती है, वहां मृत कर्मचारी की मासिक मजदूरी के 50% के बराबर राशि को प्रासंगिक कारकों से गुणा किया जाना है।

4. अब, हम अधिनियम की योजना का परीक्षण करने के लिए आगे बढ़ते हैं, जहां तक यह प्रतिकर की राशि के परिमाणीकरण से संबंधित है। अधिनियम, 1923 की धारा 4(1)(ए) स्पष्ट रूप से विहित करती है कि मृत्यु के प्रकरण में, मृत कर्मचारियों की 'मासिक मजदूरी' के 50% के बराबर राशि को प्रासंगिक कारक से गुणा किया जाना चाहिए।

5. अधिनियम, 1923 की धारा 4 का स्पष्टीकरण 1 यह बताता है कि खंड (ए) के प्रयोजनों के लिए, किसी कर्मचारी के संबंध में "प्रासंगिक कारक" का अर्थ अनुसूची IV के दूसरे कॉलम में विनिर्दिष्ट कारक है; जो अनुसूची के पहले कॉलम में उस प्रविष्टि के सामने है, जो उन वर्षों की संख्या विनिर्दिष्ट करती है जो उस तिथि के ठीक पूर्ववर्ती, जिस तिथि को प्रतिकर देय हुआ था, कर्मचारी के अपने अंतिम जन्मदिन पर पूरी की गई आयु के वर्षों के समान हैं।

6. हम पाते हैं कि प्रत्यर्थी-रेलवे ने एक दुर्घटना रिपोर्ट तैयार किया था, जिसे उपरोक्त रिट याचिका के साथ दाखिल शपथपत्र में अनुलग्नक 4 के रूप में संलग्न किया गया है और मृत कर्मचारी का वेतन स्पष्ट रूप से 39,900/- रुपये उल्लिखित किया गया है। तत्काल संदर्भ के लिए उसे नीचे उद्धृत किया गया है:-



ANNEXURE "A"
PARA-2.1

EAST CENTRAL RAILWAY (DHANBAD DIVISION)
NOTICE BOOK OF ACCIDENT
Workman's Compensation Act
To be filled up to workman or on behalf of workman

Department: Electrical Station/Office: Chopon Shop No. _____
Reference No. _____

1. Date of accident : 08-04-2023
2. Time of day at which accident occurred : 09:45 hrs
3. Place accident occurred (If not on Railway premises, it must be so stated) : Near Power House at RMA
4. Nature and cause of accident and detail statement of the circumstances under which it happened : Fell down from electric pole
5. Nature of injury sustained whether slight or severe : _____
6. Name : Vinod Kumar Joshi Casts : SL Ticket/Gang No : _____
7. Designation : St. Peah. age under/over 15 yrs. _____

Sex : male Rate of pay Rs : 39900/-
Station/Office/Shop : _____ (9300-34800) Gr. Pay - 4200
Dated : /20 Signature or LT.1 of person injured _____

To be filled up by the Employer or his Agent.

1. Time and the date of accident reported by employee : 09:45 hrs on 08.04.2023
2. To whom reported : K.N. Singh, SSE/RMA
3. Method of report : Written, Statement
4. If notice not reported by the employee how and when did Railway Authorities become aware of the accident : N.A.
5. Did accident arise out of and in the course of his employment? : Yes
6. If injured person has been disabled, state when first absent through accident : _____

Time : _____ Date : /20 Page 1 of 6

[Signature]

7. अभिलेख से यह भी पुष्ट होता है कि दुर्घटना रिपोर्ट में जो अनुलग्नक 2 के रूप में संलग्न है, मृत्यु के समय मृतक की आयु 55 वर्ष बताई गई है। तत्काल संदर्भ के लिए दुर्घटना रिपोर्ट नीचे उद्धृत किया गया है:-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



मासिक मजदूरी	39,900/- रुपये
मासिक मजदूरी का 50%	19,950/- रुपये
55 वर्ष की आयु के लिए अनुसूची IV के अनुसार कारक	135.56
प्रतिकर की राशि	$19,950 \times 135.56 = 27,04,422/-$ रुपये

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



विधान है। वे इस बात का भी विवाद नहीं कर सके कि 10,16,700/- रुपये की सीमा तक प्रतिकर का अनुदान एक गलत गणना है, जबकि विचाराधीन विधान की कल्याणकारी प्रकृति को देखते हुए, किसी अन्य गणना पद्धति का प्रावधान जिसके परिणामस्वरूप कम अभिकलन होता है, उस गणना द्वारा अतिष्ठित होना चाहिए जो अधिनियम, 1923 की धारा 5 के साथ पठित धारा 4(1)(ए) के अनुरूप हो।

10. सर्वोच्च न्यायालय ने जनरल मैनेजर, केरल राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम सुसम्मा थॉमस और अन्य के वाद में "उचित" प्रतिकर के प्रश्न पर निष्कर्ष निकालते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि गुणक विधि तार्किक रूप से सुदृढ़ और "उचित" प्रतिकर सुनिश्चित करने की कानूनी रूप से अच्छी तरह से स्थापित विधि है, जो पंचाट में एकरूपता और निश्चितता लाएगी। इस विधि से हटने को केवल दुर्लभ और असाधारण परिस्थितियों तथा अत्यंत अपवादात्मक प्रकरणों में ही न्यायोचित ठहराया जा सकता है।

11. हम लता वाधवा और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य के वाद में निर्णय से लाभप्रद रूप से संकेत ले सकते हैं; जब एक दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटना के वारिसों/जीवित बचे लोगों द्वारा कई दावे उठाए गए थे, जिसके परिणामस्वरूप कई व्यक्तियों की जलने की चोट से मृत्यु हो गई थी, तो सर्वोच्च न्यायालय ने मामले में विशेषज्ञता रखने वाले भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश, न्यायमूर्ति वाई.वी. चंद्रचूड़ को आज तक के विभिन्न निर्णयों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए प्रतिकर निर्धारित करने के लिए नियुक्त किया।

12. न्यायमूर्ति चंद्रचूड़ ने गुणक विधि को अपनाया और उसके आधार पर विभिन्न मौतों/चोटों से संबंधित प्रतिकर की मात्रा निर्धारित किया; और प्रतिकर की मात्रा निर्धारित करने की उक्त विधि को तत्पश्चात सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया।

13. सर्वोच्च न्यायालय ने, उपरोक्त निर्णय में वार्षिक आय के 60% की निर्भरता के आधार पर प्रतिकर के परिमाणीकरण की विधि को मंजूरी दी और तत्पश्चात उनकी आयु के आधार पर विभिन्न गुणक लागू किए। इसने उन चर की भरपाई करने के लिए एक पारंपरिक आंकड़े को भी मंजूरी दिया, जो परिमाणीकरण योग्य नहीं थे। यह भी उल्लेखनीय है कि प्रतिकर निर्धारित करते समय, प्रतिकर के अलावा कर्मचारियों को देय अन्य लाभों को ध्यान में नहीं रखा गया। मृतक के आश्रितों को पहले से ही दिए गए लाभ को ध्यान में नहीं रखा गया, क्योंकि प्रतिकर का

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



परिमाणीकरण, अन्य वैधानिक अधिकारों और हकदारियों से स्वतंत्र रूप से किया जाना आवश्यक था।

14. हालांकि वर्तमान वाद में, चूंकि क्षेत्र विशेष अधिनियमन अर्थात् कर्मचारी प्रतिकर अधिनियम, 1923 द्वारा आच्छादित है, इसलिए गणना को अधिनियम, 1923 की धारा 5 के साथ पठित धारा 4(1)(ए) के वैधानिक प्रावधान को ध्यान में रखते हुए किया जाना है। उक्त विधान एक कल्याणकारी विधान होने के कारण, अधिनियम का उद्देश्य देय प्रतिकर की राशि से संबंधित निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए एक निर्विवाद कार्यप्रणाली प्रदान करना है। हालांकि, यह न्यायनिर्णयन प्राधिकारी को हकदार नहीं बनाता है या अधिक प्रतिकर प्रदान करने की आयुक्त की शक्ति में बाधा के रूप में कार्य नहीं करता है। ऐसा उदाहरण हो सकता है, जहां दावेदार अधिनियमन के प्रावधानों को न जानते हुए या अपने अधिकारों के प्रति जागरूक न होते हुए, कम प्रतिकर के लिए दावा करता है; लेकिन न्यायालय यह पाता है कि दावेदार द्वारा किए गए दावे के बावजूद, न्यायनिर्णयन प्राधिकारी ऐसा प्रतिकर प्रदान नहीं कर सकता जो संविधि द्वारा प्रदान किए गए प्रतिकर से कम हो। यहां तक कि "कारक" की प्रयोज्यता के बारे में अस्पष्टता के मामले में भी, न्यायनिर्णयन प्राधिकारी के लिए "कारक" या "मासिक मजदूरी" पर विचार करना अनिवार्य है जो उच्चतर प्रतिकर की ओर ले जाता है और किसी भी परिस्थिति में आयुक्त द्वारा अधिनियम के तहत प्रदान किए गए प्रतिकर से कम प्रतिकर प्रदान नहीं किया जा सकता है।

15. उपरोक्त अर्थान्वयन विधान के उद्देश्य और लक्ष्य के अनुरूप है और इसे प्रत्येक वाद के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए आगे नुकसान प्रदान करने और परिणामस्वरूप प्रतिकर बढ़ाने के लिए आयुक्त को पर्याप्त शक्तियां देने के लिए भी पढ़ा जा सकता है।

16. अध्यक्ष, रेलवे बोर्ड और अन्य बनाम चंद्रिमा दास (श्रीमती) और अन्य के वाद में में लोक विधि उपचारों और भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत प्रतिकर प्रदान करने के मुद्दे से निपटते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने एक सिद्धांत निर्धारित किया कि लोक विधि उपचारों को अपकृत्य के क्षेत्र तक भी विस्तारित किया गया है और न्यायालय उस याचिकाकर्ता को प्रतिकर प्रदान कर सकता है, जो व्यक्तिगत चोटों का शिकार हुआ है, जो सरकार के अधिकारियों के हाथों अपकृत्यपूर्ण कृत्य के समान है। इसने इस तर्क को खारिज कर दिया कि ऐसे उपचार के लिए, याचिकाकर्ता को सिविल न्यायालय में जाना होगा और संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत याचिका पोषणीय नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय ने धारित किया कि जहां लोक पदाधिकारी शामिल

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



हैं और मामले किसी मौलिक अधिकार के उल्लंघन या सार्वजनिक कर्तव्यों के प्रवर्तन से संबंधित हैं, वहां लोक विधि के तहत उपचार अभी भी उपलब्ध होगा, इस बात के बावजूद कि निजी कानून के तहत नुकसान के लिए वाद दायर किया जा सकता है।

17. प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया था कि जहां तक याचिकाकर्ता द्वारा प्रतिकर की राशि में 60,00,000/- रुपये तक की वृद्धि की मांग का संबंध है, विभाग केवल अधिनियम, 1923 के अंतर्गत प्रदान किए गए अनुसार प्रतिकर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है और नुकसान के रूप में किसी भी वृद्धि के लिए, सरकार को परोक्ष रूप से उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है।

18. इसके विपरीत, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया है कि एक कल्याणकारी राज्य में राज्य के कार्य केवल विधि के अंतर्गत प्रदान किए गए दायित्वों को पूरा करने तक सीमित नहीं हैं, बल्कि उसे परोक्ष रूप से उत्तरदायी होने की जिम्मेदारी भी लेनी होगी, ताकि सरकारी तंत्र के आवश्यक घटक अर्थात् उनके कर्मचारी, यदि अपकृत्य का कृत्य करते हुए पाए जाते हैं, तो सरकार, जिसके वे कर्मचारी हैं, को कर्मचारियों द्वारा अन्याय किए गए व्यक्ति को नुकसान प्रदान करने में परोक्ष रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है और उसके अधीन किया जा सकता है।

19. हम पाते हैं कि विभाग द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट स्पष्ट रूप से बताती है कि मृत कर्मचारी ने शटडाउन के लिए कहा था लेकिन स्पष्ट रूप से राज्य सरकार के अन्य कर्मचारियों द्वारा ऐसा नहीं किया गया, जिसके परिणामस्वरूप मृत कर्मचारी को बिजली का झटका लगा, जो सीढ़ी से गिरने और परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु का कारण था।

20. उपरोक्त स्वीकृत स्थिति स्पष्ट रूप से मृत व्यक्ति के विरुद्ध "अपकृत्य" किए जाने के सभी तत्वों को स्थापित करती है, ताकि वारिसों/दावेदारों को अनुतोष या नुकसान का हकदार बनाया जा सके।

21. अब, हम राज्य के अधिवक्ता की इस अन्य आपत्ति पर आगे बढ़ते हैं, कि दायित्व की प्रकृति को देखते हुए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उच्च न्यायालय के असाधारण क्षेत्राधिकार का आह्वान करके याचिकाकर्ता को अनुतोष उपलब्ध नहीं है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



22. अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उच्च न्यायालय द्वारा संवैधानिक शक्ति के प्रयोग को "न्यायिक पुनर्विलोकन" की शक्ति के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। यदि कोई कर्मचारी किसी अन्य कर्मचारी की मृत्यु के परिणामस्वरूप कोई सिविल दोष करता हुआ पाया जाता है, तो इस न्यायालय की राय में राज्य को परोक्ष रूप से उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए और तदनुसार ऐसी कार्रवाई को संविधान के अंतर्गत अपनी न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति के प्रयोग में न्यायिक संवीक्षा के अधीन किया जा सकता है। विशेष रूप से, जब जीवन के अधिकार का क्रूरतापूर्वक उल्लंघन किया गया हो और इसलिए जिन्हें अनुच्छेद 12 के अर्थ के भीतर "प्राधिकारी" माना जा सकता है, उन्हें इस न्यायालय के क्षेत्राधिकार के अधीन किया जा सकता है और संवैधानिक जनादेशों की कसौटी पर संवीक्षा के अधीन किया जा सकता है। चोटें पहुंचाना, जो अपकृत्यपूर्ण कृत्य के समान था, के लिए इस न्यायालय द्वारा **रुदन साह बनाम बिहार राज्य** से शुरू होने वाले अपने कई निर्णयों में प्रतिकर दिया गया है। (यह भी देखें **भीम सिंह बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य**, **पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम बिहार राज्य**, **पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स बनाम पुलिस कमिशनर, दिल्ली पुलिस मुख्यालय, सहेली, ए वुमन्स रिसोर्स सेंटर बनाम पुलिस आयुक्त, अरविंदर सिंह बग्गा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**, **पी. रथिनम बनाम भारत संघ**, **सविंदर सिंह ग्योवर की मृत्यु, संदर्भ, इंदर सिंह बनाम पंजाब राज्य और डी.के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य**।)

23. वर्तमान वाद में, लोक पदाधिकारियों की संलिप्तता है और स्वीकृत तथ्यों पर ही मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ है, ऐसा होने पर, चूंकि "जीवन" को एक बुनियादी मानवाधिकार के रूप में मान्यता दी गई है, जिसकी व्याख्या न्यायालयों द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 से संबंधित विभिन्न निर्णयों में की गई है, हम पाते हैं कि राज्य परोक्ष रूप से उत्तरदायी है और नुकसान के लिए उपचार, जिसके परिणामस्वरूप प्रतिकर में वृद्धि होती है, का दावा भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत किया जा सकता है। **खड़क सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य** में, "जीवन" शब्द को पशु अस्तित्व से कुछ अधिक इंगित करने वाला माना गया था; और इसका उल्लंघन संविधान के अनुच्छेद 226 का आह्वान करके उपचार किए जाने वाले वादहेतुक को जन्म दे सकता है।

24. राज्य के कर्मचारी कभी-कभी, जैसा कि वर्तमान वाद में है, ऐसे खतरनाक कर्तव्य निभाते हैं जो उनके जीवन के लिए खतरा भी पैदा करते हैं, हालांकि, ऐसे कर्तव्य इस दृढ़ विश्वास

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



के साथ किए जाते हैं कि राज्य उनके "जीवन" के लिए जिम्मेदार होगा जैसा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 और विभिन्न मानवाधिकार घोषणाओं के तहत गारंटी दी गई है, जिसका भारत भी एक पक्षकार है; लेकिन हालांकि, वर्तमान मामले में, राज्य विफल रहा है, और इस प्रकार परोक्ष रूप से उत्तरदायी है, और नुकसान का भुगतान करने के लिए संवैधानिक दायित्व के अधीन है।

25. राजस्थान राज्य बनाम विद्यावती में, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सरकार अपने कर्मचारी के अपकृत्यपूर्ण कृत्य के लिए परोक्ष रूप से उत्तरदायी होगी। गुजरात राज्य बनाम मेमन मोहम्मद हाजी हसन और बसव्व कोम द्यमंगौड़ा पाटिल बनाम मैसूर राज्य में इस न्यायालय के निर्णयों का संदर्भ भी दिया जा सकता है। इन सिद्धांतों को एन. नागेंद्र राव एंड कंपनी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य में और पुनः महाराष्ट्र राज्य बनाम कंचनमाला विजयसिंह शिर्के में दोहराया गया था।

निष्कर्ष

1. हम यह दर्ज करने के लिए विवश हैं कि विभाग सामान्य सुरक्षा उपायों के मानकों की अनदेखी करने का दोषी है और परिणामस्वरूप लापरवाही ने अंततः परिवार के एकमात्र कमाने वाले की मृत्यु का कारण बना। न्यायनिर्णयन प्राधिकारी द्वारा परिमाणीकरण के अभाव में, विभाग द्वारा दिए गए किसी आंकड़े को ऐसे परिमाणीकरण का कोई आधार प्रदान किए बिना स्वीकार करना, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रतिकर की राशि का निर्धारण अधिनियम, 1923 की धारा 5 के साथ पठित धारा 4(1)(ए) के वैधानिक प्रावधानों के अनुसार किया जाना है जो स्वयं परिकल्पना करता है अर्थात् मृत कर्मचारी की "मासिक मजदूरी" के 50% के बराबर राशि को प्रासंगिक कारकों से गुणा किया जाना है। इसके अलावा, ऊपर संदर्भित विभिन्न निर्णयों के विचार में, हम पाते हैं कि कोई विस्तृत सूची प्रदान नहीं की जा सकती है, लेकिन निश्चितता के लिए, अधिनियम 1923 की धारा 4 के तहत परिकल्पित प्रतिकर का निर्धारण करते समय और अपवादात्मक प्रकरणों में नुकसान प्रदान करने के लिए निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखा जाना है:-

(i) इसे ध्यान में रखा जाना है कि मृतक और आश्रितों की जीवन प्रत्याशा क्या थी और मृतक अपने शेष जीवन के दौरान कितनी राशि अर्जित करता, वह राशि जो वह उस अवधि के दौरान आश्रितों को प्रदान करता।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ii) अधिनियम, 1923 की धारा 5 के साथ पठित धारा 4(1)(ए) के अंतर्गत प्रदान किए गए निर्धारण के अलावा, यह भी देखा जा सकता है कि यदि उक्त पूंजी प्रचलित ब्याज दर पर निवेश की जाती, जो एक स्थिर अर्थव्यवस्था को स्वीकार्य है, जिसे बचत के रूप में उपयोग किया गया होता; और जिसकी किसी कर्मचारी से अपने बच्चों/परिवार के सदस्यों के बेहतर भविष्य के लिए निवेश करने की अपेक्षा की जाती है; लेकिन उसकी मृत्यु के कारण, इसका निवेश नहीं किया गया।

(iii) मृतक को बेहतर रोजगार या आय मिलने की संभावनाओं को यानी समग्र तस्वीर जो मायने रखती है, को "उचित" प्रतिकर यानी उठाए गए नुकसान तक पहुंचने के लिए अभिकलन या मूल्यांकन करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए।

(iv) क्षति/नुकसान/दर्द/कठिनाई की सीमा के प्रश्न, मुद्रास्फीति के प्रभाव को भी ध्यान में रखा जा सकता है। [संदर्भ: वी. कृष्णकुमार बनाम तमिलनाडु राज्य और अन्य]

2. उपरोक्त के दृष्टिगत, विवादक संख्या 1 याचिकाकर्ता के पक्ष में निर्णीत किया जाता है और यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अधिनियम, 1923 की धारा 5 के साथ पठित धारा 4(1)(ए) के अंतर्गत प्रदान किए गए प्रतिकर की राशि का परिमाणीकरण त्रुटिपूर्ण होने के कारण, न्यायनिर्णयन प्राधिकारी द्वारा इसे पुनः निर्धारित करने की आवश्यकता है और ऐसा करने के बाद, वह विभाग के कर्मचारियों के अपकृत्यपूर्ण कृत्य के लिए नुकसान प्रदान करने पर भी विचार कर सकता है, जैसा कि ऊपर इंगित किया गया है, अन्य उपशमनकारी कारकों को ध्यान में रखते हुए।

3. यह भी प्रावधान किया जाता है कि उपरोक्त निर्धारण के बाद, याचिकाकर्ता/दावेदार कर्मचारी की मृत्यु की तिथि अर्थात् दुर्घटना की घटना से, राशि पर 10,16,700/- रुपये की कटौती करने के बाद, जो पहले ही याचिकाकर्ताओं/दावेदारों को भुगतान की जा चुकी है, पूरी राशि के वास्तविक भुगतान की तिथि तक 12% प्रति वर्ष की दर से ब्याज के हकदार होंगे।

तर्क- (विवादक संख्या 2)

1. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि यद्यपि, आदेश दिनांक 29.11.2023 दर्ज करता है कि शपथपत्र पर कुछ साक्ष्य दाखिल किए गए थे, लेकिन चूंकि अधिनियम 1923 की धारा 5 के साथ पठित धारा 4(1)(ए) के संदर्भ में राशि के प्रतिकर का कोई

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अभिकलन नहीं था, इसलिए याचिकाकर्ता को "प्रासंगिक कारकों" से संबंधित अपना प्रकरण रखने का कोई अवसर नहीं दिया गया जो प्रतिकर में वृद्धि के मुकाबले नुकसान के दावे के लिए आवश्यक थे और न्यायनिर्णयन प्राधिकारी ने ऐसे अभिकलन और अवसर के बिना 10,16,700/- रुपये की प्रतिकर राशि को "उचित" प्रतिकर के रूप में स्वीकार कर लिया; जो नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के इनकार के समान है और इस प्रकार यह निर्णय-पश्चात सुनवाई थी; और निर्णय-पूर्व स्तर पर ऑडी ऑल्टरम पार्टम नियम का पालन करने में विफलता, प्रतिकर के निर्धारण को दूषित करती है और तदनुसार वे उच्चतर प्रतिकर के हकदार हैं जिसके लिए वर्तमान रिट याचिका में प्रार्थना की गई है।

2. उन्होंने एच.एल. ब्रेहन बनाम भारत संघ में प्रतिपादित अनुपात पर भरोसा किया है ताकि यह तर्क दिया जा सके कि निर्णय-पश्चात सुनवाई का अवसर नैसर्गिक न्याय के नियमों की पूर्ति नहीं करता है और वह प्राधिकारी जो निर्णय-पश्चात सुनवाई शुरू करता है, स्वाभाविक रूप से निकटतम प्रवृत्ति के साथ आगे बढ़ेगा और ऐसी निर्णय-पश्चात सुनवाई में अभ्यावेदन पर उचित विचार प्राप्त करने का शायद ही कोई मौका हो। उन्होंने आगे मेनका गांधी बनाम भारत संघ के वाद पर भरोसा किया है और प्रस्तुत किया है कि ऑडी ऑल्टरम पार्टम नियम के सिद्धांतों का कोई भी उल्लंघन प्रशासनिक प्रक्रिया को पंगु बनाने की ओर ले जाएगा और न्यायालय को दिए गए प्रकरण में अनुमेय अधिकतम सीमा तक इस प्रमुख नियम को बचाने का हर संभव प्रयास करना चाहिए। उन्होंने मेनका गांधी के निर्णय से निम्नलिखित अंश पर भरोसा किया है।

"न्यायालय को प्रस्तुत वाद में अनुमेय अधिकतम सीमा तक इस प्रमुख नियम को बचाने का हर संभव प्रयास करना चाहिए। यह नहीं भूलना चाहिए कि "नैसर्गिक न्याय व्यावहारिक रूप से लचीला है और परिस्थितियों के बाध्यकारी दबाव के तहत कैप्सूलीकरण के अधीन है"। ऑडी ऑल्टरम पार्टम नियम किसी कठोर सांचे में नहीं ढाला गया है और न्यायिक निर्णय स्थापित करते हैं कि इसमें स्थितिजन्य संशोधन हो सकते हैं। हालांकि, इसका मूल बना रहना चाहिए, अर्थात् प्रभावित व्यक्ति को सुनवाई का उचित अवसर मिलना चाहिए और सुनवाई एक वास्तविक सुनवाई होनी चाहिए न कि कोई खोखला जनसंपर्क अभ्यास।"

3. इसके विपरीत, प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि उन्होंने अधिनियम, 1923 की धारा 4 के अनुसार प्रतिकर निर्धारित किया है, लेकिन प्रतिकर के परिमाणीकरण के

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



आधार के बारे में एक स्पष्ट प्रश्न पर, वे यह नहीं बता सके कि प्रतिकर निर्धारित करते समय किन कारकों पर विचार किया गया था।

चर्चा- (विवादक संख्या 2)

1. वर्तमान वाद के तथ्यों में यह निर्धारित किया जाना है कि क्या याचिकाकर्ता को विभाग या न्यायनिर्णयन प्राधिकारी द्वारा नोटिस दिया गया था या ठोस साक्ष्य प्रदान करके अपने दावे को प्रमाणित करने का अवसर दिया गया था, जो उनके अनुसार विभिन्न कारकों के संबंध में उनके दावे को प्रमाणित करता, जिन पर प्रतिकर के परिमाणीकरण से पूर्व विचार किया जाना चाहिए था और साथ ही नुकसान के लिए उनके दावे के प्रति भी, जिसके लिए राज्य परोक्ष रूप से उत्तरदायी है, इसलिए स्वयं उनके प्रतिकर में वृद्धि के लिए।

2. यह अंकित करना भी प्रासंगिक है कि यदि याचिकाकर्ता प्रतिकर की गणना या परिमाणीकरण के कारकों को उचित ठहराने में विफल रहती, तो भी क्या विभाग या न्यायनिर्णयन प्राधिकारी की ओर से, प्रतिकर के परिमाणीकरण के आधार पर विचार किए बिना, सीधे तौर पर कोई आंकड़ा प्रदान करना या स्वीकार करना उचित था। प्रत्यर्थी, अपने निर्देशों में, यह इंगित नहीं कर सके कि वे कौन से कारक थे जिन्होंने 10,16,700/- रुपये के आंकड़े का आधार बनाया; और विद्वान स्थायी अधिवक्ता भी यह इंगित नहीं कर सके कि क्या न्यायनिर्णयन प्राधिकारी द्वारा अपने आदेश दिनांक 29.11.2023 में निर्धारण से पहले, क्या उसने परिमाणीकरण के प्रश्न पर याचिकाकर्ताओं को नोटिस देने का प्रयास किया या क्या उसने स्वयं उस आधार पर विचार किया जिस पर विभाग ने उक्त प्रतिकर निर्धारित किया है।

निष्कर्ष

1. उपरोक्त तथ्यों से, विभाग को यह स्वीकृत है कि याचिकाकर्ता को उपशमनकारी कारकों को प्रदर्शित करने के लिए कोई नोटिस नहीं दिया गया था ताकि उस आधार को निर्धारित किया जा सके जिस पर प्रतिकर का परिमाणीकरण किया जा सकता था। वे उक्त परिमाणीकरण या किसी गुणक के आधार, या "रेस्ट्रिक्ट्यूटियो इन इंटिग्रम" के सिद्धांतों को भी उचित नहीं ठहरा सके। वे नैसर्गिक न्याय के दो मूलभूत सूत्रों के अनुपालन को भी प्रदर्शित नहीं कर सके अर्थात्।

(i) ऑडी ऑल्टरम पार्टम

(ii) नेमो जूडेक्स इन रे सुआ

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



2. ऑडी ऑल्टरम पार्टम नियम के कई पहलू हैं, जिनमें से दो हैं:

(ए) बनाए जाने वाले मामले का नोटिस, और

(बी) समझाने का अवसर।

3. अब यह कोई अनसुलझा मुद्दा नहीं है कि भले ही विधि प्रभावित व्यक्ति को निर्णय-पूर्व सुनवाई देने के संबंध में मौन हो और जिसमें गंभीर प्रकृति के नागरिक परिणाम शामिल हों, इसमें अंतर्निहित रूप से नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत शामिल होते हैं, जो यह मांग करते हैं कि प्रभावित होने वाले व्यक्ति को निर्धारण से पहले उसे नोटिस देकर एक अवसर दिया जा सकता है; और इसलिए न्यायालय को अधिकतम सीमा तक इस प्रमुख नियम को बचाने का हर संभव प्रयास करना चाहिए। (संदर्भ: उड़ीसा राज्य बनाम डॉ. (सुश्री) बीनापानी देई)। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को अब इतना मौलिक माना जाता है कि इसे 'व्यवस्थित स्वतंत्रता की अवधारणा में अंतर्निहित' माना जाता है और, इसलिए, प्रत्येक निर्णय लेने वाले कार्य में अंतर्निहित है, चाहे उसे न्यायिक, अर्ध-न्यायिक या प्रशासनिक कहें। जहां कानून नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के पालन के बारे में मौन है, वहां ऐसी वैधानिक चुप्पी को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुपालन का अर्थ माना जाता है। (स्वदेशी कॉटन मिल्स बनाम भारत संघ संदर्भ लें)।

4. किसी संविधि की योजना में स्वयं निर्णय-पश्चात सुनवाई का प्रावधान करने वाला प्रावधान हो सकता है, साधारण खंड अधिनियम की धारा 21 की शर्तों द्वारा निर्णय-पश्चात सुनवाई भी की जा सकती है; लेकिन यह आवश्यक रूप से संबंधित कानून के प्रावधान के अर्थान्वयन में मदद नहीं कर सकता है। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अपवर्जन आम तौर पर, तब होता है जब जनहित का प्रश्न शामिल हो और विधि स्वयं निर्णय-पश्चात सुनवाई का प्रावधान करता हो।

5. हालांकि, वर्तमान वाद में हम नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के लिए ऐसा कोई अपवर्जन या जनहित का कोई प्रश्न नहीं पाते हैं, क्योंकि कर्मचारी प्रतिकर अधिनियम, 1923 के अंतर्गत प्रतिकर के निर्धारण का प्रश्न बहुत ही व्यक्तिगत या एक निजी अधिकार है। हम पाते हैं कि याचिकाकर्ता को साक्ष्य या अन्य उपशमनकारी कारकों के माध्यम से प्रमाणित करने का अवसर दिया जाना चाहिए था, औसत वार्षिक आय के गुणन (50% की सीमा तक) के अलावा उन "प्रासंगिक कारकों" के साथ जो विधि में प्रदान किए गए हैं; जिसे वर्तमान मामले में अस्वीकार कर दिया गया है; और इसलिए न्यायनिर्णयन प्राधिकारी का प्रतिकर के अभिकलन को स्वीकार

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



करने का निर्णय, विभाग द्वारा इसके आधार को उचित ठहराए बिना या दावेदार/याचिकाकर्ता को नोटिस दिए बिना, स्पष्ट रूप से नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन में है, जिसे विधि की एक निहित आवश्यकता के रूप में पढ़ा जाना है।

6. तदनुसार, वर्तमान वाद के तथ्यों और परिस्थितियों के तहत, निर्णय-पूर्व स्तर पर नैसर्गिक न्याय के ऑडी ऑल्टरम पार्टम नियम की ऐसी निहित आवश्यकता का अनुपालन नहीं किया गया है।

7. परिवार एक मध्यम वर्ग से संबंधित है और कमाने वाले की अनुपस्थिति में, दर्द और पीड़ा, खोई हुई मजदूरी और भविष्य की देखभाल जो मुद्रास्फीति की प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक होगी; और तदनुसार, 'रेस्ट्रिक्ट्यूटियो इन इंटीग्रम' सूत्र लागू होता है अर्थात् व्यथित व्यक्ति को वह धनराशि मिलनी चाहिए, जो उसे उसी स्थिति में ला दे, यदि उसके साथ कोई गलत काम न हुआ होता।

8. हम पाते हैं कि ऐसी परिस्थितियों में, प्रतिकर में वृद्धि के माध्यम से नुकसान प्रदान करने के प्रश्न पर भी विचार किया जाना है। हालांकि, हम स्वयं को ऐसे नुकसान के अभिकलन से रोकते हैं, जिसकी याचिकाकर्ता/दावेदार हकदार हो सकती है और इसे न्यायनिर्णयन प्राधिकारी पर छोड़ देते हैं, ताकि वे ऊपर बताए गए मानदंडों/विचारों को ध्यान में रखते हुए इसे निर्धारित कर सकें।

तर्क- विवादक संख्या 3

1. प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने एक अधिसूचना दिनांक 03.01.2020 पर भरोसा किया है जो अधिनियम, 1923 की धारा 4(1बी) के कथित प्रयोग में, पूर्व अधिसूचना दिनांक 31.05.2010 के अतिलंघन में भारत के राजपत्र में प्रकाशित हुई है, यह तर्क देने के लिए कि मासिक मजदूरी 15,000/- रुपये तक सीमित कर दी गई है; और तदनुसार उक्त राशि को अधिनियम, 1923 की धारा 4 के अंतर्गत प्रतिकर प्रदान करने के प्रयोजनों के लिए विचार किया जाना है।

2. इसके विपरीत, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है, कि अधिनियम, 1923 की धारा 5 स्पष्ट रूप से प्रावधान करती है कि "मासिक मजदूरी" अभिव्यक्ति का अर्थ मजदूरी की वह राशि है, जो एक महीने की सेवा के लिए देय है और अधिनियम, 1923 की धारा

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



5 के साथ जुड़ा स्पष्टीकरण आगे स्पष्ट करता है कि सेवा की अवधि को उक्त प्रयोजनों के लिए निरंतर माना जाएगा, जिसे 14 दिनों से अधिक काम से अनुपस्थिति की अवधि से बाधित नहीं किया गया है।

3. उन्होंने आगे तर्क दिया है कि "मासिक मजदूरी" को सीमित करने से वैधानिक प्रावधान अर्थात् अधिनियम, 1923 की धारा 5; निरर्थक हो जाएगी।

चर्चा- विवादक संख्या 3

1. हमने अधिनियम, 1923 के प्रावधानों अर्थात् धारा 4(1बी) और धारा 5 की परस्पर क्रिया का सावधानीपूर्वक परीक्षण किया है। उप-धारा (1बी) का सावधानीपूर्वक परिशीलन, निस्संदेह आधिकारिक राजपत्र में किसी कर्मचारी के संबंध में ऐसी "मासिक मजदूरी" अधिसूचित करने की शक्ति देता है, जो निम्नलिखित स्थितियों में प्रतिकर की राशियों के निर्धारण के उद्देश्य से आवश्यक हो सकती है:-

(ए) जहां चोट के परिणामस्वरूप मृत्यु होती है- या

(बी) जहां चोट के परिणामस्वरूप स्थायी पूर्ण निःशक्तता होती है; या

(सी) जहां चोट के परिणामस्वरूप स्थायी आंशिक निःशक्तता होती है; या

(डी) जहां चोट के परिणामस्वरूप अस्थायी निःशक्तता, चाहे पूर्ण हो या आंशिक, होती है।

2. अधिनियम, 1923 की धारा 5 मजदूरी की गणना की विधि प्रदान करती है अर्थात् यह "मासिक मजदूरी" अभिव्यक्ति को अर्थ देती है अर्थात् मजदूरी की वह राशि जो एक महीने की सेवा के लिए देय मानी जाती है; और धारा 5(ए) वर्तमान वाद के प्रयोजनों के लिए प्रासंगिक हो सकती है, जिसमें कहा गया है कि जहां कर्मचारी दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती कम से कम 12 माह की निरंतर अवधि के दौरान, उस नियोक्ता की सेवा में रहा हो जो प्रतिकर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, वहां कर्मचारी की मासिक मजदूरी उस अवधि के अंतिम 12 महीनों में नियोक्ता द्वारा उसे भुगतान के लिए देय "कुल मजदूरी का 1/12वां भाग" होगा। वर्तमान वाद में, मृत कर्मचारी दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती वर्षों तक निरंतर सेवा में था।

3. उक्त धारा उस परिस्थिति पर भी ध्यान देती है, जब कर्मचारी की सेवा एक माह से कम थी; तब उस परिस्थिति में, कर्मचारी की मासिक मजदूरी औसत मासिक राशि होगी जो

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती 12 माह के दौरान कर्मचारी द्वारा अर्जित की जा रही थी; और अंत में यह एक परिस्थिति के लिए प्रावधान करती है, "अन्य प्रकरणों" में उदाहरण के लिए उन मामलों में जिनमें आवश्यक जानकारी के अभाव में खंड (बी) के अंतर्गत मासिक मजदूरी की गणना करना संभव नहीं है, मासिक मजदूरी दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती सेवा की अंतिम निरंतर अवधि के संबंध में अर्जित कुल मजदूरी का 30 गुना होगी, जिसे ऐसी अवधि वाले दिनों की संख्या से विभाजित किया जाएगा।

4. अधिनियम, 1923 की धारा 4(1बी) और धारा 5 के प्रावधान में सामंजस्य स्थापित करने के लिए, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए विधान के उद्देश्य या अधिनियम की योजना का विश्लेषण किया जाना चाहिए कि क्या धारा 4(1बी) सभी प्रयोजनों के लिए अधिनियम, 1923 की धारा 5 के लिए आगे बढ़ेगी या इसे उन परिस्थितियों के लिए रास्ता देना होगा, जो अधिनियम, 1923 की धारा 5 द्वारा आच्छादित हैं।

5. **पंडित राम नारायण बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** के वाद में, सर्वोच्च न्यायालय ने टिप्पणी किया कि किसी अधिनियम में प्रयुक्त अभिव्यक्ति को उस संदर्भ से रंग लेना चाहिए जिसमें वे प्रकट होते हैं। **ईस्ट इंडिया होटल्स लिमिटेड और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य** के वाद में, सर्वोच्च न्यायालय ने एक स्थापित सिद्धांत को दोहराया कि एक अधिनियम को संपूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए और विभिन्न प्रावधानों में सामंजस्य स्थापित किया जाना चाहिए और उन सभी को प्रभाव दिया जाना चाहिए और किसी एक खंड पर निर्णय देना तब तक उचित नहीं है जब तक कि पूरे विधि का परीक्षण न कर लिया जाए (संदर्भ: **दर्शन सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य**; और **महाराष्ट्र राज्य बनाम मरवांजी एफ. देसाई और अन्य**)

6. अब यह कोई अनसुलझा मुद्दा नहीं है कि एक अर्थान्वयन पाठ और संदर्भ पर लिया जाना चाहिए, जैसा कि **कर्मचारी भविष्य निधि आयुक्त बनाम आधिकारिक परिसमापक एस्के फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड** के वाद में अभिनिर्धारित किया गया है।

7. अधिनियम, 1923 की धारा 4(1बी) और धारा 5 के वैधानिक प्रावधान में सामंजस्य स्थापित करने के लिए, यह न्यायालय का कर्तव्य है कि उक्त प्रावधान की व्याख्या ऐसे तरीके से करे जो अंततः दो अलग-अलग क्षेत्रों में टकराव से बचे और साथ ही, विचाराधीन विधान के उद्देश्य को प्राप्त करे, ताकि उपयुक्त हो, विधायिका के इरादे का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया जाना चाहिए, उसी संविधि के दो प्रावधानों के बीच परस्पर क्रिया को स्पष्ट करने में।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



8. यह न्यायालय, लाभप्रद रूप से मेसर्स अफली फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य के वाद में सिद्धांत का संदर्भ देता है, जिस पर ओ.एन.जी.सी. लिमिटेड बनाम अफकॉन्स गुनानुसा जेवी में पुष्टि के साथ विचार किया गया था, और जिसने "सामंजस्यपूर्ण अर्थान्वयन के सिद्धांतों" के संदर्भ को निर्धारित किया है, अर्थात् प्रावधान का अधिनियम के संदर्भ में इस प्रकार अर्थान्वयन किया जा सकता है, कि विधि का कोई भी शब्द अनावश्यक, आवश्यकता से अधिक या अर्थहीन न हो जाए। सर्वोच्च न्यायालय ने, हाल ही में सहायक आयकर आयुक्त (अंतर्राष्ट्रीय कराधान) और अन्य बनाम शेल्फ ड्रिलिंग रॉन टैपमेयर लिमिटेड आदि के वाद में वर्तमान विवादक पर विचार किया है और तत्काल संदर्भ के लिए प्रस्तर-9 नीचे उद्धृत किया गया है:

"वैधानिक अर्थान्वयन के सिद्धांत :

9. आगे बढ़ने से पहले, आधिकारिक स्रोतों से वैधानिक अर्थान्वयन के प्रासंगिक सिद्धांतों पर चर्चा करना उपयोगी होगा।

9.1 एक संविधि या उसमें किसी अधिनियमित प्रावधान का इस प्रकार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए कि वह प्रभावी और प्रवर्तनीय बन सके। इस प्रकार, न्यायालयों को ऐसे अर्थान्वयन से बचना चाहिए जो किसी प्रावधान को व्यर्थता में बदल दे। हाउस ऑफ लॉर्ड्स के लॉर्ड डुनेडिन द्वारा यह संप्रेक्षण किया गया है कि "एक संविधि को कार्यशील होने के लिए डिज़ाइन किया गया है, और किसी न्यायालय द्वारा उसका अर्थान्वयन उस उद्देश्य को सुरक्षित करने के लिए होना चाहिए, जब तक कि महत्वपूर्ण चूक या स्पष्ट निर्देश उस लक्ष्य को अप्राप्य न बना दें।" देखें व्हिटनी बनाम अंतर्देशीय राजस्व आयुक्त, (1926) ए.सी. 37 ("व्हिटनी")। इसलिए, कोई भी ऐसा अर्थान्वयन जो विधायिका के स्पष्ट इरादे को हरा दे, उसे न्यायालयों द्वारा अस्वीकार कर दिया जाना चाहिए। अतः, न्यायालयों को ऐसे अर्थान्वयन से बचना चाहिए जो प्रावधान को व्यर्थता में बदल दे और इसके बजाय उस दृष्टिकोण पर आधारित अर्थान्वयन को स्वीकार करना चाहिए कि संसद या कोई भी विधायिका केवल एक प्रभावी परिणाम लाने के उद्देश्य से ही कानून बनाएगी। इसी संदर्भ में न्यायालय द्वारा उद्देश्यपूर्ण अर्थान्वयन को स्वीकृति मिल रही है बजाय यह मानने के कि कानून में कोई बेतुकापन है। वैधानिक प्रावधानों को पूर्ण प्रभाव देने के उद्देश्य से उद्देश्यपूर्ण व्याख्या के सिद्धांत का सहारा लिया जा सकता है और न्यायालयों को यह बताना चाहिए कि कानून का क्या अर्थ होना चाहिए बजाय इसके कि संविधि को अकृत कर दिया जाए।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



9.2 वैधानिक अर्थान्वयन का एक अन्य सिद्धांत यह है कि जब किसी कानून के शब्द स्पष्ट, सादे या असंदिग्ध हों, अर्थात्, वे यथोचित रूप से केवल एक ही अर्थ के लिए ग्राह्य हों, तो न्यायालय परिणाम की परवाह किए बिना उस अर्थ को प्रभाव देने के लिए बाध्य हैं। अर्थान्वयन के परिणाम तब न्यायालय के लिए कोई विषय नहीं होते, भले ही वे अजीब या आश्चर्यजनक, अनुचित या अन्यायपूर्ण या दमनकारी हो सकते हैं। कनाईलाल सुर बनाम परमनिधि साधु खान, ए.आई.आर. 1957 एस.सी. 907 में न्यायमूर्ति गजेंद्रगडकर ने इस प्रकार राय दिया:

"यदि प्रयुक्त शब्द केवल एक ही अर्थान्वयन के लिए सक्षम हैं तो न्यायालयों के लिए यह खुला नहीं होगा कि वे इस आधार पर किसी अन्य काल्पनिक अर्थान्वयन को अपनाएं कि ऐसा काल्पनिक अर्थान्वयन अधिनियम के अभिकथित उद्देश्य और नीति के साथ अधिक सुसंगत है।"

सी.आई.टी., एग्री बनाम केशव चंद्र मंडल, ए.आई.आर. 1950 एस.सी. 265 में न्यायमूर्ति एस.आर. दास ने इस प्रकार टिप्पणी किया:

"कठिनाई या असुविधा विधायिका द्वारा नियोजित भाषा के अर्थ को नहीं बदल सकती यदि ऐसा अर्थ संविधि या नियमावली के चेहरे पर स्पष्ट है।"

उन्होंने आगे टिप्पणी किया कि:

"कानून की भावना एक मायावी और असुरक्षित मार्गदर्शक हो सकती है और कथित भावना को निश्चित रूप से अधिनियम की धाराओं की सादी भाषा के विरोध में प्रभाव नहीं दिया जा सकता है"। देखें रणजय सिंह बनाम बैजनाथ सिंह, ए.आई.आर. 1954 एस.सी. 749"

9.3 इसी तरह, न्यायमूर्ति सुब्बाराव ने टिप्पणी किया कि एक संविधि के अर्थान्वयन में, प्राथमिक परीक्षण अधिनियम में नियोजित भाषा है और जब शब्द स्पष्ट और सादे हों, तो न्यायालय विधायिका के व्यक्त इरादे को स्वीकार करने के लिए बाध्य है, देखें एम.वी. जोशी बनाम एम.यू. शिम्पी, ए.आई.आर. 1961 एस.सी. 1494।

9.4 इसका अर्थ यह है कि केवल कठिनाई किसी कानून के प्रावधानों के प्रत्येक शब्द को प्रभावी और व्याकरणिक अर्थ न देने का आधार नहीं हो सकती यदि उसमें प्रयुक्त भाषा असंदिग्ध है। इस प्रकार, एक असंदिग्ध और सादे कानून को इसकी पूर्ण व्याख्या दी जानी चाहिए। यह टिप्पणी किया गया है कि असंदिग्ध का अर्थ "संदर्भ में असंदिग्ध" है। इस संबंध में "संदर्भ" अभिव्यक्ति का उपयोग व्यापक अर्थ में किया गया है, जिसमें न केवल उसी कानून के अन्य

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अधिनियमित प्रावधान शामिल हैं, बल्कि इसकी प्रस्तावना, कानून की मौजूदा स्थिति, समरूप विषय में अन्य कानून और वह बुराई शामिल है, जिसे उन और अन्य वैध साधनों से पहचाना जा सकता है कि कानून का उद्देश्य उस बुराई का उपचार करना था। इस संदर्भ में, वी.ओ. ट्रेक्टरोएक्सपोर्ट बनाम तारापोर एंड कंपनी, ए.आई.आर. 1971 एस.सी. 1 में न्यायमूर्ति गोवर के शब्दों को याद करना उपयोगी होगा, जो इस प्रकार हैं:-

"हम अर्थान्वयन के ऐसे किसी नियम से अवगत नहीं हैं जिसके द्वारा कुछ अभिव्यक्तियों को एक विशेष अर्थ देकर पहले घोर अस्पष्टता पेश की जा सके और फिर अंतरराष्ट्रीय दायित्वों को प्रभावी बनाने के लिए विधायिका के अनुमानित इरादे का सहारा लेकर शब्दार्थ संबंधी भ्रम और अस्पष्टता से बाहर निकलने का प्रयास किया जा सके।"

9.5 दूसरी ओर, स्पष्ट अर्थ का नियम उस स्तर पर लागू होता है जब शब्दों का उनके संदर्भ में अर्थान्वयन किया गया हो और यह निष्कर्ष निकाला गया हो कि वे केवल एक ही अर्थ के लिए ग्राह्य हैं। उस स्थिति में, इस प्रकार प्राप्त अर्थ को परिणामों की परवाह किए बिना प्रभाव दिया जाना है।

9.6 आगे, किसी कानून की व्याख्या करते समय इसे संपूर्णता में पढ़ा जाना चाहिए और अधिनियम के एक प्रावधान का उसी अधिनियम के अन्य प्रावधानों के संदर्भ में अर्थान्वयन किया जाना चाहिए ताकि पूरे कानून का एक सुसंगत अधिनियम बन सके। इस तरह के अर्थान्वयन का गुण यह है कि यह किसी धारा के भीतर या किसी धारा और कानूनों के अन्य भागों के बीच किसी भी असंगति या विसंगति से बचाता है। एक ही अधिनियम की दो धाराओं के बीच टकराव से बचना न्यायालयों का कर्तव्य है और "जब भी ऐसा करना संभव हो, ऐसे प्रावधानों का अर्थान्वयन करना जो परस्पर विरोधी प्रतीत होते हैं ताकि वे सामंजस्य बिठा सकें"। ऐसा करते समय किनारों को सुचारु किया जाना चाहिए ताकि अधिनियम के प्रावधानों को अधिनियम के उद्देश्य के अनुरूप पढ़ा जा सके। इस प्रकार, एक कानून की एक धारा के प्रावधानों का उपयोग उसी कानून की दूसरी धारा को हराने के लिए नहीं किया जा सकता है। यही नियम किसी धारा की उप-धारा पर लागू होता है। वेंकटरमण देवरु बनाम मैसूर राज्य ए.आई.आर. 1958 एस.सी. 255 में, न्यायमूर्ति वेंकटरामा अय्यर ने कहा कि "अर्थान्वयन का नियम सुस्थापित है कि जब किसी अधिनियम में दो प्रावधान होते हैं जिनका एक-दूसरे के साथ समाधान नहीं किया जा सकता है, तो उनकी इस

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



प्रकार व्याख्या की जानी चाहिए कि, यदि संभव हो, दोनों को प्रभाव दिया जाना चाहिए। इसे ही सामंजस्यपूर्ण अर्थान्वयन का नियम कहा जाता है।"

9.7 इसलिए, दोनों प्रावधानों को प्रभाव दिया जाना चाहिए। इस प्रकार, ऐसा अर्थान्वयन जो किसी एक प्रावधान को "बेकार कबाड़" या 'मृत पत्र' में बदल देता है, से बचा जाना चाहिए। ऐसी स्थिति से निपटने के तरीकों में से एक यह पता लगाना है कि दो स्पष्ट रूप से परस्पर विरोधी प्रावधानों में से कौन सा अधिक सामान्य है और कौन सा अधिक विशिष्ट है और उसी के अनुसार उनका अर्थान्वयन करना है। हालांकि, यदि किसी विशिष्ट प्रावधान को सामान्य प्रावधान के आदेश के भीतर पढ़ा जाना है, तो उसे उसी के अनुसार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए ताकि सामान्य प्रावधान के जनादेश को प्रभाव दिया जा सके। हालांकि, यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है जहां अधिनियम की दो धाराओं का समाधान नहीं किया जा सकता है, क्योंकि उनके बीच पूर्ण विरोधाभास है, तो अक्सर यह कहा जाता है कि बाद वाले को अभिभावी होना चाहिए। ऐसी स्थिति को देखने का दूसरा तरीका यह पता लगाना है कि कौन सा प्रमुख प्रावधान है और कौन सा अधीनस्थ प्रावधान है और किसे दूसरे को रास्ता देना चाहिए, लेकिन केवल तभी, जब दो स्पष्ट रूप से विरोधाभासी प्रावधानों का एक सामंजस्यपूर्ण अर्थान्वयन संभव हो, जो किसी भी बेतुकेपन को जन्म न दे या व्यावहारिक असुविधा उत्पन्न न करे या मौजूदा कानून के सुस्थापित प्रावधान को निष्प्रभावी न बनाए, तो उसका सहारा लिया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, एक ऐसी व्याख्या जो संसद के इरादे को कमजोर कर दे या किसी बेतुकेपन को जन्म दे या किसी भी विधिक प्रावधान को निष्प्रभावी बना दे, से बचना चाहिए।

(स्रोत: जी.पी. सिंह - वैधानिक अर्थान्वयन के सिद्धांत, 15वां संस्करण लेक्सिसनेक्सिस)।"

9. हम अधिनियम, 1923 की धारा 4(1बी) और धारा 5 के शीर्षक का भी संदर्भ ले सकते हैं। धारा 4 का शीर्षक "प्रतिकर की राशि" है; जबकि धारा 5 का शीर्षक "मजदूरी की गणना की विधि" है। मुख्य रूप से, धारा 4(1बी) केंद्र सरकार को "मासिक मजदूरी" निर्धारित करने के लिए प्रोत्साहन देती है और धारा 5 विभिन्न परिस्थितियों में मजदूरी की गणना करने की विधि निर्धारित करती है। यह भी अब कोई अनसुलझा मुद्दा नहीं है कि भले ही कोई अधिसूचना वैधानिक प्रावधान के अपने कथित प्रयोग में जारी की गई हो, वह किसी वैधानिक प्रावधान को ही अभिभावी नहीं करेगी; क्योंकि यह स्वयं वैधानिक प्रावधान में संशोधन करने के समान होगा। वैधानिक शक्तियों के तहत सरकारी विभागों द्वारा जारी कोई परिपत्र, अधिसूचनाएं या निर्देश केवल व्याख्यात्मक या

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



प्रशासनिक मार्गदर्शन हैं और कानून के प्रावधानों को अभिभावी, उल्लंघन या प्रतिस्थापित नहीं कर सकते हैं। एक वैधानिक प्रावधान सर्वोच्च होता है, और किसी भी अधीनस्थ विधायिका या कार्यकारी निर्देशों को इसके अनुरूप होना चाहिए। यह अब कोई अनसुलझा मुद्दा नहीं है कि कार्यकारी आदेश वैधानिक प्रावधान को अभिभावी नहीं कर सकता है।

10. उपरोक्त के दृष्टिगत, सामंजस्यपूर्ण अर्थान्वयन का सिद्धांत और कानून का यह सिद्धांत कि एक अधिसूचना, जिसे केवल एक अधीनस्थ विधान के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है, कानून के एक वैधानिक प्रावधान को अभिभावी नहीं कर सकती है; इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि परिपत्र दिनांक 03.01.2020 अधिनियम, 1923 की धारा 5 के वैधानिक प्रावधान को अभिभावी नहीं कर सकता है, जो मजदूरी की गणना करने की एक विधि प्रदान करता है, जो अधिनियम, 1923 की धारा 4 के प्रयोजनों के लिए प्रासंगिक है। उपरोक्त निष्कर्ष को अधिनियम के उद्देश्य और इस तथ्य से भी बल मिलता है कि यह एक कल्याणकारी विधान है।

11. लाभ के लिए, कर्मचारी प्रतिकर अधिनियम, 1923 के 'उद्देश्यों और कारणों का कथन' नीचे उद्धृत किया गया है:

"कर्मकार प्रतिकर के सामान्य सिद्धांत लगभग सार्वभौमिक स्वीकृति प्राप्त कर चुके हैं, और भारत अब सभ्य देशों के बीच लगभग अकेला है जो उन सिद्धांतों को समाहित करने वाले कानून के बिना है। कई वर्षों से अधिक उदार नियोक्ताओं को स्वेच्छा से प्रतिकर देने की आदत रही है, लेकिन यह प्रथा किसी भी तरह से सामान्य नहीं है। इस देश में उद्योग की बढ़ती जटिलता, मशीनरी के बढ़ते उपयोग और कर्मकारों के लिए परिणामी खतरे के साथ-साथ स्वयं कर्मकारों की तुलनात्मक गरीबी, यह उचित बनाती है कि उन्हें, जहां तक संभव हो, दुर्घटनाओं से उत्पन्न होने वाली कठिनाई से बचाया जाना चाहिए। इस प्रकार के कानून का एक अतिरिक्त लाभ यह है कि नियोक्ता के लिए पर्याप्त सुरक्षा उपकरणों के महत्व को बढ़ाकर, यह कर्मकारों के लिए दुर्घटनाओं की संख्या को इस तरह कम करता है, जिसे आधिकारिक निरीक्षण द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता है।

इसके अलावा, नियोक्ताओं को अपने कर्मकारों के लिए पर्याप्त चिकित्सा उपचार प्रदान करने के लिए दिया जाने वाला प्रोत्साहन ऐसी दुर्घटनाओं के प्रभावों को कम करेगा जो घटित होती हैं। कर्मकार को इस प्रकार दिए गए लाभ और सुरक्षा की बढ़ी हुई भावना जिसका वह आनंद लेगा,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



औद्योगिक जीवन को अधिक आकर्षक बना देना चाहिए और इस प्रकार उपलब्ध श्रम की आपूर्ति में वृद्धि करनी चाहिए। साथ ही, औसत कर्मकार की दक्षता में तदनुरूप वृद्धि की उम्मीद की जा सकती है। बीमा की एक प्रणाली किसी विशेष नियोक्ता पर समय के बोझ को बहुत भारी रूप से दबाव डालने से रोकेगी।

भारत सरकार द्वारा प्रश्न की विस्तृत जांच के बाद, जुलाई 1921 में स्थानीय सरकारों को संबोधित किया गया था, और भारत सरकार के अनंतिम विचार सामान्य जानकारी के लिए प्रकाशित किए गए थे। कानून बनाने की सलाह को स्थानीय सरकारों के बड़े बहुमत और नियोक्ताओं और श्रमिकों के संघ द्वारा स्वीकार कर लिया गया है और भारत सरकार का मानना है कि जनमत आम तौर पर कानून बनाने के पक्ष में है।

जून 1922 में, प्रश्न पर विचार करने के लिए एक समिति बुलाई गई थी। यह समिति, अधिकांश भाग के लिए इंपीरियल विधानमंडल के सदस्यों से बनी थी। भारत सरकार द्वारा प्राप्त कई उत्तरों और रायों पर विचार करने के बाद, समिति सर्वसम्मति से कानून बनाने के पक्ष में थी और उन तर्ज के संबंध में विस्तृत सिफारिशें तैयार किया, जिस पर उसकी राय में ऐसे कानून को पालन करना चाहिए। अब प्रस्तुत विधेयक इन सिफारिशों का निकटता से पालन करता है। जहां आवश्यक हो वहां कई पूरक प्रावधान जोड़े गए हैं, लेकिन व्यावहारिक रूप से महत्व की कोई भिन्नता नहीं की गई है।

विधेयक में दो अलग-अलग प्रस्ताव शामिल हैं। अध्याय II में नियोक्ताओं के अपने कर्मकारों द्वारा झेली गई चोटों के संबंध में नुकसान के लिए दायित्व को प्रभावित करने वाले सामान्य सिविल कानून में संशोधन किए गए हैं; ये खंड केवल सामान्य सिविल न्यायालयों के समक्ष कार्रवाइयों में काम करेंगे। विधेयक का मुख्य भाग कर्मकार प्रतिकर के लिए प्रावधान करता है और इस श्रेणी के अंतर्गत आने वाले दावों से निपटने के लिए विशेष तंत्र स्थापित करता है।

विधेयक के दोनों भाग, हालांकि, कर्मकारों के एक ही वर्ग पर लागू होते हैं। यदि नियोक्ताओं के दायित्व खंडों का दायरा कर्मकारों के प्रतिकर प्रावधानों के दायरे से अधिक व्यापक कर दिया जाता, तो मुकदमों में भारी वृद्धि का काफी खतरा होता। शामिल किए गए वर्ग वे हैं जिनके समावेशन की समिति द्वारा सिफारिश की गई थी, और उन्हें अनुसूची II में विनिर्दिष्ट किया गया है। शामिल किए जाने वाले वर्गों के निर्धारण में दो मानदंडों का पालन किया गया है-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(1) कि विधेयक को उन उद्योगों तक ही सीमित रखा जाना चाहिए जो कमोबेश संगठित हैं;

(2) कि केवल वे कर्मकार जिनका व्यवसाय खतरनाक है, उन्हें ही शामिल किया जाना चाहिए।

सामान्य सिद्धांत यह है कि प्रतिकर साधारणतया उन कर्मकारों को दिया जाना चाहिए जिन्हें उनके नियोजन से उत्पन्न और उसके अनुक्रम में दुर्घटनाओं से व्यक्तिगत चोटें आई हों। बीमारी के लिए भी कुछ सीमित परिस्थितियों में प्रतिकर दिया जाएगा। देय प्रतिकर की वास्तविक दरें समिति की सर्वसम्मत सिफारिश पर आधारित हैं। वे प्रत्येक वाद में निश्चित अधिकतम के अधीन हैं, जो समिति की सिफारिशों के अनुसार है। हालांकि, यह याद रखा जाना चाहिए कि अधिक वेतन पाने वाले कर्मकार उन मामलों में सक्षम होंगे जिन पर नियोक्ताओं के दायित्व खंड लागू होंगे, कर्मकार प्रतिकर के लिए निर्धारित अधिकतम से काफी अधिक पैमाने पर नुकसान प्राप्त करने के लिए।

जितना संभव हो सके विवादों के लिए कम से कम अवसर देने का एक सुसंगत प्रयास किया गया है। पूरे विधेयक में अपनाई गई परिभाषाओं में चुने गए पैमाने, और अनुमत अपवादों का महान लक्ष्य सटीकता रहा है ताकि कम से कम मामलों में प्रतिकर के दावे की वैधता या उस दावे की राशि संदेह के घेरे में हो। साथ ही, समिति की सर्वसम्मत सिफारिश पर ऐसे किसी भी विवाद से जो उत्पन्न हो सकता है, सस्ते और शीघ्रता से निपटने के लिए विशेष न्यायाधिकरण के लिए प्रावधान किया गया है, और आम तौर पर पक्षकारों की इस तरह से सहायता करने के लिए जो सामान्य सिविल न्यायालयों के लिए संभव नहीं है।"

12. उपरोक्त उद्देश्य स्पष्ट रूप से परिकल्पना करता है कि कर्मचारी के लिए पर्याप्त सुरक्षा उपकरणों के महत्व को बढ़ाकर, कर्मकार (कर्मचारी) के लिए दुर्घटना की संख्या को इस तरह कम करता है जिसे आधिकारिक निरीक्षण द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता है। वह लाभ जो एक कर्मचारी अधिनियमन से प्राप्त करता है, वह सुरक्षा की बढ़ी हुई भावना है, और जो औद्योगिक जीवन को अधिक आकर्षक बना देगा, जो अनुकूलता और श्रम की आपूर्ति के साथ बढ़ी हुई उपलब्धता को पूरा करेगा। अपने कर्मचारी को लगी चोट के संबंध में नुकसान के लिए नियोक्ता के दायित्व को सर्वोपरि बनाया गया था और इस श्रेणी के अंतर्गत आने वाले दावों से निपटने के लिए विशेष तंत्र स्थापित करके प्रतिकर का प्रावधान किया गया था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



13. हम यह भी पाते हैं कि समिति के समक्ष विचारों में से एक यह था कि अधिक वेतन पाने वाला कर्मकार, नियोक्ता के दायित्व खंड के तहत, कर्मकार के प्रतिकर के लिए निर्धारित अधिकतम से काफी अधिक पैमाने पर "नुकसान" प्राप्त करने का हकदार होगा। हम लाभप्रद रूप से **भारत संघ बनाम प्रभाकरन विजया कुमार और अन्य** के वाद में निर्णय का संदर्भ दे सकते हैं, जिसमें जब एक महिला ट्रेन में प्रवेश करने का प्रयास कर रही थी, रेलवे ट्रैक पर गिर गई और ट्रेन के नीचे आ गई और परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई, तो विधिक प्रतिनिधियों द्वारा रेलवे दावा न्यायाधिकरण के समक्ष दावा याचिका दायर करने पर, इसने यह अभिनिर्धारित किया कि यह रेलवे अधिनियम, 1989 की धारा 123(सी) में उक्त अभिव्यक्ति के अर्थ के भीतर "अप्रिय घटना" नहीं था; क्योंकि यह यात्री का ट्रेन से दुर्घटनावश गिरना नहीं था। हालांकि सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह वाद "यात्रियों को ले जाने वाली ट्रेन से यात्री के दुर्घटनावश गिरने" की अभिव्यक्ति के अंतर्गत आता है जो एक "अप्रिय घटना" थी।

उपरोक्त वाद में, उपरोक्त प्रावधानों और रेलवे अधिनियम, 1989 की धारा 123(सी) के अंतर्गत परिभाषित "अप्रिय घटना" शब्दों का अर्थान्वयन करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने धारित किया कि, यह एक सुस्थापित विधि है कि यदि किसी कल्याणकारी या भलाई वाले विधि में प्रयुक्त शब्द दो अर्थान्वयनों के लिए सक्षम हैं, तो वह जो अधिनियम के उद्देश्य के साथ अधिक सुसंगत है और उस व्यक्ति के लाभ के लिए है जिसके लिए अधिनियम बनाया गया था, उसे प्राथमिकता दी जानी चाहिए। दूसरे शब्दों में, कल्याणकारी या भलाई वाले कानूनों को एक उदार और न कि शाब्दिक या कठोर व्याख्या दी जानी चाहिए। *एलेम्बिक केमिकल वर्क्स कंपनी लिमिटेड बनाम वर्कमैन (ए.आई.आर. प्रस्तर 7)*, *जीवनलाल लिमिटेड बनाम अपीलीय प्राधिकारी (ए.आई.आर. प्रस्तर 11)*, *लालप्पा लिंगप्पा बनाम लक्ष्मी विष्णु टेक्सटाइल मिल्स लिमिटेड (ए.आई.आर. प्रस्तर 13)*, *एस.एम. निलजकर बनाम टेलीकॉम डिस्ट्रिक्ट मैनेजर (एस.सी.सी. प्रस्तर 12)* पर भरोसा किया गया था। प्रभाकरन विजया कुमार और अन्य (उपरोक्त) का प्रस्तर संख्या 13 नीचे उद्धृत किया गया है:

"13. *हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड बनाम अशोक विष्णु काटे* में इस न्यायालय ने टिप्पणी किया: (एस.सी.सी. पृष्ठ 347-48, प्रस्तर 41-42)



"41. इस संबंध में, हम उपयोगी रूप से वर्कमैन बनाम अमेरिकन एक्सप्रेस इंटरनेशनल बैंकिंग कॉर्पोरेशन में इस न्यायालय के निर्णय की ओर मुड़ सकते हैं, जिसमें न्यायमूर्ति चिन्नप्पा रेड्डी, ने रिपोर्ट के प्रस्तर 4 में निम्नलिखित टिप्पणी किए हैं: (एस.सी.सी. पृष्ठ 76)

'4. वैधानिक अर्थान्वयन के सिद्धांत अच्छी तरह से स्थापित हैं। सामाजिक कल्याण विधान और मानवाधिकार विधान जैसे उदार आयात के कानूनों में आने वाले शब्दों को प्रोक्रेस्टियन बेड (कठोर सांचे) में नहीं रखा जाना चाहिए या लिलिपुटियन (अत्यंत छोटे) आयामों में सिकुड़ना नहीं चाहिए। इन विधानों के अर्थान्वयन में शाब्दिक अर्थान्वयन के पाखंड से बचा जाना चाहिए और इसके दुरुपयोग की फालतूता को पहचाना और कम किया जाना चाहिए। न्यायाधीशों को ऐसे कानूनों के रंग, "सामग्री" और "संदर्भ" से अधिक चिंतित होना चाहिए (हमने लॉर्ड विल्बरफोर्स के प्रेन बनाम सिमंड्स की राय से शब्द लिए हैं)। उसी राय में लॉर्ड विल्बरफोर्स ने इंगित किया कि कानून को शाब्दिक अर्थान्वयन के किसी द्वीप में पीछे नहीं छोड़ा जाना चाहिए, बल्कि भाषा से परे, उन तथ्यों के जाल से अलग नहीं पूछताछ करनी चाहिए जिसमें वे स्थापित हैं; विधि की व्याख्या विशुद्ध रूप से आंतरिक भाषाई विचारों पर नहीं की जानी चाहिए। हमारे समक्ष उद्धृत प्रकरणों में से एक में, अर्थात्, सुरेंद्र कुमार वर्मा बनाम केंद्र सरकार औद्योगिक न्यायाधिकरण-सह-श्रम न्यायालय हमें यह कहने का अवसर मिला था: (एस.सी.सी. पृष्ठ 447, प्रस्तर 6)

"6. 'रोटी और मक्खन' (आजीविका का मुख्य साधन) कानूनों की व्याख्या में शब्दार्थ विलासिता अनुचित है। कल्याणकारी कानूनों को अनिवार्य रूप से व्यापक अर्थान्वयन प्राप्त होना चाहिए। जहां कानून कुछ प्रकार की बुराइयों के विरुद्ध राहत देने के लिए डिज़ाइन किया गया है, वहां न्यायालय को व्युत्पत्ति संबंधी भ्रमण करके घुसपैठ नहीं करनी चाहिए।"

42. फ्रांसिस बेनियन ने अपनी 'स्टैच्यूटरी इंटरप्रीटेशन', दूसरा संस्करण, में अपनी पुस्तक के भाग XV में कार्यात्मक अर्थान्वयन नियम से निपटा है। उद्देश्यपूर्ण अर्थान्वयन की प्रकृति को भाग XX के पृष्ठ 659 पर इस प्रकार निपटाया गया है:

'किसी अधिनियमन का उद्देश्यपूर्ण अर्थान्वयन वह है, जो विधायी उद्देश्य को प्रभाव देता है -

(ए) अधिनियमन के शाब्दिक अर्थ का पालन करना जहां वह अर्थ विधायी उद्देश्य के अनुसार है (इस संहिता में इसे उद्देश्यपूर्ण-और-शाब्दिक अर्थान्वयन कहा जाता है), या

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(बी) एक तनावपूर्ण अर्थ लागू करना जहां शाब्दिक अर्थ विधायी उद्देश्य के अनुसार नहीं है (संहिता में इसे उद्देश्यपूर्ण-और-तनावपूर्ण अर्थान्वयन कहा जाता है)।'

उसी पुस्तक के पृष्ठ 661 पर, लेखक ने शाब्दिक अर्थान्वयन के विपरीत 'उद्देश्यपूर्ण अर्थान्वयन' के विषय पर विचार किया है। विद्वान लेखक ने इस प्रकार टिप्पणी किया है:

'शाब्दिक अर्थान्वयन के विपरीत - यद्यपि "उद्देश्यपूर्ण अर्थान्वयन" शब्द नया नहीं है, इसका चलन में आना अपीलिय न्यायालयों द्वारा शाब्दिक अर्थान्वयन से दूर हटने का संकेत देता है। लॉर्ड डिपलॉक ने 1975 में कहा था: "यदि कोई पिछले 30 वर्षों में वैधानिक अर्थान्वयन के प्रश्नों पर [हाउस ऑफ लॉर्ड्स] के वास्तविक निर्णयों को पीछे मुड़कर देखता है, तो वह वैधानिक प्रावधानों के विशुद्ध रूप से शाब्दिक से उद्देश्यपूर्ण अर्थान्वयन की ओर प्रवृत्ति के साक्ष्य से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।" इस मामले को लॉर्ड डिपलॉक ने इस प्रकार संक्षेप में प्रस्तुत किया-

...में एक उद्देश्यपूर्ण अर्थान्वयन को अपनाने में संकोच नहीं करता, जहां प्रयुक्त विधायी भाषा के शाब्दिक अर्थ को लागू करने से ऐसे परिणाम सामने आएंगे जो स्पष्ट रूप से अधिनियम के उद्देश्यों को विफल कर देंगे। लेकिन ऐसा करने में जिस कार्य में न्याय का न्यायालय लगा हुआ है वह अर्थान्वयन का ही रहता है, भले ही इसमें अधिनियम में उन शब्दों को पढ़ना शामिल हो जो इसमें स्पष्ट रूप से शामिल नहीं हैं।' "

(बल दिया गया)"

14. शायद यह हमें वापस उस प्रश्न पर लाता है कि एक बार जब धारा 5 के अंतर्गत मजदूरी "गणना करने की विधि" प्रदान कर दी गई है, तो अधिनियम, 1923 की धारा 4(1बी) के तहत प्रावधान करने का विधायिका का क्या इरादा हो सकता है, केंद्र सरकार को ऐसी "मासिक मजदूरी" की अधिसूचना जारी करने के लिए प्रदान करके जैसा वह आवश्यक समझे; उस कर्मचारी के लिए जो अधिनियम, 1923 की धारा 4 के तहत प्रतिकर का हकदार है।

15. इसमें कोई संदेह नहीं है कि धारा 5 तीन अलग-अलग आकस्मिकताओं की कल्पना करती है और उक्त तीन आकस्मिकताओं में मजदूरी की गणना की एक विधि प्रदान करती है; लेकिन फिर भी ऐसी परिस्थिति हो सकती है जहां एक दावेदार, वास्तविक "मासिक मजदूरी" को प्रदर्शित करने में सक्षम न हो, जिसका मृत कर्मचारी हकदार था या ऐसी परिस्थिति हो सकती है,

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



जहां किसी कर्मचारी को मजदूरी मिल रही हो जो इतनी अल्प हो सकती है कि अधिनियम, 1923 की धारा 5 के तहत प्रदान की गई कार्यप्रणाली को लागू करने पर, अधिनियम, 1923 की धारा 4 के तहत परिकल्पित प्रतिकर की राशि इतनी अल्प हो कि यह एक "उचित प्रतिकर" न हो; और जो अधिनियम, 1923 का इरादा न हो; और मृतक के आश्रितों या परिवार को सामाजिक सुरक्षा के रूप में। उक्त परिस्थितियों में, धारा 4(1बी) के अंतर्गत एक अधिसूचना को ध्यान में रखा जाना चाहिए, जो न्यूनतम "मासिक मजदूरी" 15000/- रुपये प्रदान करती है।

निष्कर्ष

पूर्वगामी चर्चाओं के दृष्टिगत हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि यदि किसी मृत कर्मचारी का मामला अधिनियम, 1923 की धारा 5 के अंतर्गत प्रदान की गई किसी भी आकस्मिकता द्वारा आच्छादित है, तो वही लागू होगा; जिसका अर्थ होगा वह वास्तविक "मासिक मजदूरी" जो एक कर्मचारी दुर्घटना के ठीक पूर्ववर्ती आहरित कर रहा था। हालांकि, यदि किसी कर्मचारी की "मासिक मजदूरी" अधिसूचना दिनांक 03.01.2020 द्वारा प्रदान किए गए अर्थात् 15000/- से कम है, तो अधिनियम, 1923 की धारा 4 के तहत प्रतिकर की राशि की गणना के लिए मानदंड 15000/- रुपये होगा। यह अनिवार्य है और अधिनियम, 1923 के उद्देश्यों और कारणों के अनुरूप है और एक "उचित प्रतिकर" प्रदान करने के सिद्धांतों के अनुरूप है, जिसकी परिकल्पना यह अधिनियमन करता है, परिवार के कमाने वाले सदस्य की मृत्यु के कारण बेसहारा परिवार को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए। परिपत्र दिनांक 03.01.2020 द्वारा निर्धारित राशि, केवल एक मानदंड प्राप्त कर सकती है कि गणना कम राशि के साथ नहीं हो सकती है; लेकिन जहां मृत कर्मचारी को स्वीकार्य "मासिक मजदूरी" अधिक थी, उसी पर अधिनियम, 1923 की धारा 4 के अंतर्गत "प्रतिकर की राशि" निर्धारित करने के लिए विचार किया जाएगा।

निर्देश

उपरोक्त के दृष्टिगत रिट याचिका को निम्नलिखित निर्देशों के साथ स्वीकार किया जाता है।

(i) वर्तमान मामले को संबंधित क्षेत्र के आयुक्त को संदर्भित किया जाता है, जिसे राज्य सरकार द्वारा आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियुक्त किया गया हो सकता है, अधिनियम, 1923 की धारा 20 के प्रावधानों के दृष्टिगत; और वह दावेदार/याचिकाकर्ता को उनके

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



'रेस्टिट्यूटियो इन इंटीग्रम' को प्रदर्शित करने के लिए साक्ष्य/दस्तावेज दाखिल करने का नोटिस दे सकता है, जिस पर उपशमनकारी कारकों के साथ विचार किया जा सकता है; जैसा कि ऊपर इंगित किया गया है, नुकसान के अनुदान के लिए; अधिनियम, 1923 की धारा 5 के साथ पठित धारा 4 के अनुसार प्रतिकर के पुनर्निर्धारण के अलावा किया गया है।

(ii) एक बार जब दावेदार को नोटिस दे दिया जाता है और अपना साक्ष्य दाखिल करने का अवसर दे दिया जाता है, तो वह प्रतिकर का परिमाणीकरण करने के लिए आगे बढ़ेगा और निर्धारक कारकों पर विचार करते हुए। प्रतिकर का नए सिरे से परिमाणीकरण किया जाएगा और ऐसे निर्धारण की तिथि से एक माह की अवधि के भीतर दावेदार को भुगतान किया जाएगा।

(iii) एक बार नुकसान के साथ प्रतिकर निर्धारित हो जाने के बाद, उसे 12% प्रति वर्ष के ब्याज के साथ देय माना जाएगा, जिसकी गणना मृत्यु की तिथि अर्थात् दुर्घटना की तिथि से 10,16,700/- रुपये की राशि में से कटौती करने के बाद उक्त राशि के वास्तविक वितरण तक की जाएगी, जिसका भुगतान याचिकाकर्ता/दावेदार को पहले ही किया जा चुका है।

(iv) **लता वाधवा और अन्य (उपरोक्त)** के बाद में प्रतिपादित विधि के दृष्टिगत और स्वीकृत तथ्यात्मक स्थिति पर विचार करते हुए और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है, यह प्रावधान किया जाता है कि परिमाणीकरण योग्य प्रतिकर के ऊपर 1,00,000/- रुपये का एक पारंपरिक आंकड़ा जोड़ा जाना और भुगतान किया जाना है, जिसे अधिनियम, 1923 की धारा 20 के अंतर्गत नियुक्त आयुक्त द्वारा निर्धारित किया जाएगा।

(v) उपरोक्त संपूर्ण प्रक्रिया इस आदेश की प्रति प्रस्तुत करने की तिथि से चार माह की अवधि के भीतर पूरी की जानी है।

(vi) वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं है।

(न्यायमूर्ति सिद्धार्थ नंदन) (न्यायमूर्ति अतुल श्रीधरन)

27 फरवरी, 2026

सुमित.के